International Indexed & Refereed Research Journal, ISSN 0974-2832, (Print) E- ISSN- 2320-5474, November,2013, VOL-V * ISSUE-58

fo|kifr ;xhu fefFkyk

* fcUn pkgku

* lgk;d izksQslj] nkyrjke dkyst] fnYyh fo'ofo|ky;

November ,2013

मैथिल कोकिल विद्यापति हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल के प्रमुख कवि हैं। तेरहवीं शताब्दी के कवि विद्यापति का समय भारतीय इतिहास और हिंदी साहित्य के 'संक्रमण' का दौर रहा है। विद्यापति के समय में मिथिला राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के दौर से गुज़रा। मिथिला के चौदह सौ वर्षों के अंधकारमय युग के बाद कर्णाट से आए नान्यदेव ने सर्वथा एक नवीन युग का पदार्पण किया जिसे राज्य का 'निर्माण–काल' कहा जाता है।[1] डॉ॰ उपेन्द्र ठाकुर इस काल को गौरवशाली और महान उपलब्धि का युग मानते हैं।[2]

सन् 1097 ई॰ में कर्णाट वंश की स्थापना नान्यदेव द्वारा हुई। बंगाल के सेन शासकों द्वारा आक्रमण में नान्यदेव पराजित हुए। इनके बाद इनके पुत्र गंगदेव ने शासन संभाला और मिथिला को गौरवपूर्ण शासन प्रदान किया। नरहरिदेव, रामसिंह, हरिसिंह से होता हुआ साम्राज्य मुहम्मद तुगलक के आक्रमण के बाद 'ओइनवार वंश' के कामेश्वर ठाकुर को हस्तांतरित हो गया। भोगीश्वर ठाकुर, गणेश्वर ठाकुर, कीर्तिसिंह, वीरसिंह, शिवसिंह जैसे महान राजाओं के शासन और नेतृत्व में मिथिला अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त किया। विद्यापति ने ओइनवार वंशीय राजाओं के संरक्षण में रहकर अद्वितीय रचनाओं का प्रणयन किया। सामंती प्रथा इस युग की प्रमुख राजनीतिक प्रवृत्ति थी। समाज जाति के आधार पर वर्गीकृत था।

समाज का एक वर्ग जहाँ घोर विलासिता का स्वाद चख रहा था वहीं दूसरा वर्ग दो जून की रोटी के लिए लालायित था। गरीबी के दारूण व्यथा का चित्रण विद्यापति के कई पदों में मिलता है। तत्कालीन राजा अपने अधिकारी वर्ग द्वारा खेती करवाते थे। लंबी–चौड़ी खेती का प्रबंध करने हेतु 'कर्म्मान्तिक' (कमतिया) लोगों को रखा जाता था। गरीब परिवार की महिलाएँ पशु की तरह सभी प्रकार के काम करती थी। विद्यापति के एक पद से ऐसा ज्ञात होता है जब गौरी की माँ गौरी के विषय में कहती है कि अब ससुराल में उन्हें घास काटना होगा और बसहा बैल को चराना पड़ेगा।[3]

मिथिला का समूचा व्यापार यहाँ के वैश्य वर्ण के लोगों पर आधरित था। चंद्रेश्वर कृत 'गृहस्थरत्नाकर' से ज्ञात होता है कि ब्राह्मण भी व्यापार करते थे। पर वे कुछ विशेष परिस्थिति में ही व्यापार करते थे। सोमलता, मधुलता, पुष्परस, सूअर, घोड़ा आदि का विक्रय ब्राह्मणों के लिये निषिद्ध था।[4] ब्राह्मण केवल फल, मणि, क्षौभ, तिल, दही, दूध, घृत, जल, कौशेय, गुरूच्यादि औषधियों का व्यापार कर सकता था।[5]
विद्यापतिकालीन मिथिला में gkV vkj ckt kj का खूब प्रचलन था। हाट के महत्त्वपूर्ण स्थान नगर में होते थे। हाट का चित्रण और हाट से जुड़ी तमाम बातों का वर्णन विद्यापति के अनेक पदों में मिलते हैं। हाट दो प्रकार के होते थे– अस्थायी और स्थायी। विद्यापति ने अस्थायी हाट की उपमा संसार से दिया है– संसार हाट कए मानह।[6]

दुकानदारों की पत्नियाँ शृंगार कर दुकानों पर बैठती थी। अपने भाव भंगिमाओं से वे कैसे खरीददारों को अपनी ओर आकृष्ट करती थी, विद्यापति के पदों से मालूम होता है। कई जगह साझेदारी पर व्यापार किए जाने के भी उदाहरण मिलते हैं। हाट की सुव्यवस्था का दायित्व राजा पर होता था। हाट पर मध्यस्थ, साक्षी, लेखक आदि राजा के कर्मचारी होते थे।

विद्यापति के समय में भी मिथिला में *वस्तु विनिमय* प्रणाली थी। मुद्रा प्रणाली बाद में लागू हुई। मिथिला में मुद्रा को 'मोहर' कहते थे जो सोने, चांदी, तांबा आदि धातुओं के बनते थे और जिन पर मानव, पशु, पक्षी, सूर्य, धनुष, चंद्र आदि के चित्र अंकित होते थे। तत्कालीन राजा अपने–अपने नाम से मुद्रा का प्रचलन करते थे। टंक, कौड़ी, कपर्दक, वराटिका, स्वर्ण, पाद आदि सिक्कों के कई रूप थे। नाप–तौल के लिए कृष्णल, द्रोण, पल, आढ़क, भार, कुम्भ, खारी आदि माप थे।

dj&0;oLFkk राजा के आय का प्रमुख साधन था। इसी ने सामंती व्यवस्था को जन्म दिया था। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि मिथिला की आर्थिक स्थिति ठीक–ठाक थी। लेकिन सामंती व्यवस्थापरक आर्थिक स्थिति में गरीब, मेहनतकश किसानों और शूद्रों का जीवन अत्यंत नारकीय था।

मैथिल समाज का समूचा ढ़ाँचा सामंती व्यवस्था पर टिका था। पूरा समाज दो प्रमुख हिस्से में बँटा हुआ था– शोषक और शोषित। ^nkl iFkk* इस समाज की कटु व नंगी सच्चाई थी। विद्यापति युगीन मिथिला में दास–दासी के रूप में परिवर्तन हुए। इस प्रथा के बदलाव का कारण सामंती व्यवस्था रही। इसके साथ ही तद्युगीन मुसलमान बादशाह एवं सामंत–वर्ग की दास प्रथा को बढ़ावा दे रहे थे।[7] राजा अथवा सामंत को तेल मालिश, नहलाने, खिलाने, कपड़ा पहनाने यहाँ तक कि पान देने के लिए भी परिचारिकाएँ होती थी। दूसरा कारण, मुसलमानी विजेता जर्बदस्ती विजित राज्य के लोगों को दास बना लेते थे।[8] स्वयं मिथिला के राजा लोग नेपाल, कश्मीर, मगध, तेलंग, महाराष्ट्र, गौड़, कन्नौज देशों के परिचारिकाओं को रखते थे। तीसरा कारण जनता की आर्थिक विपन्नता भी थी। इस युग में पन्द्रह प्रकार

के दासों का उल्लेख मिलता है। दास–दासियों तथा शूद्र–शूद्री का क्रय–विक्रय भी प्रचलित था। बाल–विवाह, बहुविवाह, अशिक्षा, वेश्यावृत्ति इस काल का कटु सत्य था।

उपर्युक्त सामाजिक विद्रूपताओं के बावजूद सांस्कृतिक दृष्टि से मिथिला बड़ा संपन्न था। विद्यापति के तमाम पदों में तद्युगीन लोक में प्रचलित वेश–भूषा, खान–पान, तीज–त्योहार आदि का बड़ा सुंदर वर्णन मिलता है। इस युग में तीस प्रकार के पट्टवस्त्र, तेईस प्रकार के देशीय वस्त्र, चौदह प्रकार के निर्भूषण वस्त्र और चौदह प्रकार के नेत वस्त्र प्रयोग किये जाते थे।[9] समाज के सभी वर्गों के वस्त्राभूषण अलग–अलग होते थे।

विद्यापतिकालीन मिथिला में मिथिलावासी कार्यानुसार और समयानुसार वस्त्रों का प्रयोग करते थे। इस समय में पट्टवस्त्र तथा ऊनी वस्त्र दान किए जाते थे। लिखनावली के एक पत्र से ज्ञात होता है कि रेशमी और सूतीवस्त्रों का व्यापार भी मिथिला में होता था। सूतवस्त्र, सरोमवस्त्र, क्षौमवस्त्र, कौशेय वस्त्र, कुशवस्त्र, कृमिजवस्त्र, वृक्षत्वक्, संकवस्त्र, मृगलोमजवस्त्र आदि वस्त्रों के कई प्रकार थे।

तत्कालीन समाज में कुंकुम रंग के वस्त्र सौभाग्य के लिए हरिद्रा, नीलरक्त सुखी होने के लिए, लाल रंग का वस्त्र सुखित भवन प्राप्त करने की कामना से दान किए जाते थे।[10] स्त्री, पुरूष, योगी सभी के वस्त्र अलग–अलग होते थे।

तत्कालीन समाज में आभूषणों का भी बड़ा प्रचलन था। शृंगार इस युग की प्रधान प्रवृत्ति थी। कुंडल, कर्णफूल, बेसर, मोती, कंठाभरण, केयूर, टाड़, कटक, कंकण, अंगुठी, मेखला, पैर के लिए नुपूर, पादकटक, मंजीर, पाद अंगु रीयक होते थे। पुरूष प्रायः मुकुट, कुंडल और मुदरी पहनते थे। इस युग में देवी–देवताओं को भी कीमती वस्त्राभूषण पहनाने का रिवाज था।

मिथिला के [kku&iku का आधार वहाँ का भौगोलिक वातावरण रहा। विद्यापति के सम–सामयिक रचनाकारों ने अपने ग्रंथों में यहाँ के खान–पान का वर्णन किया है। इस युग में पर्व–त्योहार के अवसर पर दुर्गा, विष्णु, महादेवी आदि देवताओं को नेवैद्य देने की प्राचीन परंपरा रही है। ज्योतिरीश्वर ठाकुर के 'वर्णरत्नाकर' में इस संबंध में काफी कुछ मिलता है। द्विजों और अन्य जाति के लोगों के खान–पान में अंतर था। ब्राह्मणों के लिए कुछ प्रकार के भोजनों का भक्षण निषिद्ध था। भात–दाल, तीमन–तरकारी, माँस–माँछ, चूड़ा–दही, फल–फूल आदि प्रधान भोज्य थे। मादक पदार्थ का प्रयोग नीच वर्ण में अधिक था। विद्यापतिकालीन मैथिल समाज धर्मक्षेत्र में पूर्ण उदार था। धर्मिक संकीर्णता एवं तज्जन्य असहिष्णुता इस समाज में दृष्टिगोचर नहीं होता है। मिथिला में पंचदेवोपासना की प्रथा है। जहाँ दुर्गा, शिव, विष्णु, गणेश और सूर्य की पूजा अपेक्षित है। गंगा और सर्पपूजन भी यहां की संस्कृति का हिस्सा है।

मिथिला स्मृति–युग से ही स्मार्त्त ब्राह्मणों का केंद्र रहा था। स्मार्त्त पंचदेवोपासक होते थे।[11] इसके अलावा तंत्र–मंत्र, सिद्धी, टोने–टोटकों का भी प्रचार था। तांत्रिक लोग भी विष्णु और शिव के उपासक होते थे।[12] मिथिला सिद्धों का बहुत बड़ा पीठ था। विद्यापति का युग धार्मिक दृष्टि से संक्रमण का युग था। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति का संघर्ष इनके समय में परिलक्षित हुआ। मुसलमानों के आक्रमण, सिद्धों के पीठ, बंगाल और उड़ीसा के धर्मों से घिरा मिथिलांचल अपनी धार्मिक अक्षुण्णता को बनाए रखा। पूरे मिथिलांचल में दुर्गा, शिव, सूर्य, विष्णु, गणेश तथा अन्य देवी–देवताओं के मंदिर देखने को मिल सकते है।

विद्यापतिकालीन मिथिला में कर्म–काण्डों में लोगों का विश्वास अधिक प्रबल था। राजा प्रायः धर्मिक होते थे। राजाओं के लिए यह आदर्श था–'धर्म रक्षा करते हुए राज्य कोष की समृद्धि करना।' समय–समय पर यज्ञ–याजन तथा शांति की स्थापना के लिए अनुष्ठान होते थे। देवमंदिरों की व्यवस्था स्वतंत्र रूप से राज्य के दिशा–निर्देश में किए जाते थे। इस युग में लोग धार्मिक पर्व और उत्सवों को बड़ी श्रद्धा और उत्साह से मनाते थे। व्रतोपासना को धर्म समझा जाता था, दान–धर्म का बड़ा महत्त्व था। अनेकों प्रकार के दानों का वर्णन विद्यापति कृत 'दानवाक्यावाली' में मिलता है।

सूर्य पूजन, सूर्य ग्रहण के बाद गंगा स्नान, छठ पर्व का उल्लेख 'वर्षकृत्य' में मिलता है। इसके अलावा चतुर्थी पूजन, एकादशी व्रत आदि का भी उल्लेख किया गया है रामनवमी, दशहरा, दीपावली, होली, कृष्णजन्माष्टमी, शिवरात्रि आदि धार्मिक पर्वों का उल्लेख भी वर्षकृत्य में उपलब्ध होता है।

निष्कर्षतः कवि विद्यापति ठाकुर युगीन मिथिला जहाँ राजनीतिक दृष्टि से ओइनवार वंशीय राजाओं के प्रभुत्व में अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ। वहीं आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से निम्न वर्गों, शुद्रों और स्त्रियों की स्थिति दैन्यपूर्ण थी। सांस्कृतिक, साहित्यिक और धार्मिक दृष्टि से मिथिला निश्चितरूपेण समृद्ध और सम्पन्न राज्य था।

संदर्भ ग्रंथ

1. जे.बी.आर.एस. भाग–9, पृ॰ 300
2. ठाकुर, उपेन्द्रः हिस्ट्री ऑफ मिथिला, पृ॰ 227
3. मि.मि.बि., पृ॰ 574, पद 108
4. झा, चंद्रेश्वरः ग्रहस्थरत्नाकर, पृ॰ 435
5. वही, पृ॰ 442
6. विद्यापति पदावली (भाग–1), बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पृ. 172, पद 131
7. चौधरी, राधाकृष्णः हिस्ट्री ऑफ बिहार, पृ॰ 179
8. गोपाल, लल्लन जीः The Economic life of Northern Bihar, page 80
9. ठाकुर, ज्योतिरीश्वरः वर्णरत्नाकर, वर्ण सं. 964–79, पृ॰ 21–22
10. विद्यापति, दानवाक्यवली, पृ॰ 235
11. द्विवेदी, हजारी प्रसादः मध्यकालीन धर्मसाधना, पृ॰ 321
12. ठाकुर, उपेन्द्रः Development and Growth of tantric religion in Mithila, pg. 139